वेयणाअणंतरविहाणाणुयोगद्दारं

वेयणाअणंतरविहाणे त्ति ॥ १ ॥

अहियारसंभालणसुत्तमेदं । किमट्ठमेसो अहियारो वुच्चदे ? पुव्वं वेयणावेयणाविहाणे बज्झमाणं पि कम्मं वेयणा, उदिण्णं पि उवसंतं पि वेयणा त्ति परूविदं । तत्थ जं तं बज्झमाणकम्मं तं किं बज्झमाणसमए चेव विपच्चिदूण फलं देदि आहो बिदियादिसमएसु फलं देदि त्ति पुच्छिदे एवं फलं देदि त्ति जाणावणट्ठं वेयणाअणंतरविहाणमागदं । तत्थ बंधो दुविहो-अणंतरबंधो परंपरबंधो चेदि । को अणंतरबंधो णाम ? कम्मइयवग्गणाए ट्ठिदपोग्गलक्खंधा[1] मिच्छत्तादिपच्चएहि कम्मभावेण परिणदपढमसमए अणंतरबंधो[2] । कधमेदेसिमणंतरबंधत्तं ? कम्मइयवग्गणपज्जयपरिच्चत्ताणंतरसमए चेव कम्मपज्जएण परिणयत्तादो । को परंपरबंधो णाम ? बंधबिदियसमयप्पहुडि कम्मपोग्गलक्खंधाणं जीवपदेसाणं च जो बंधो सो परंपरबंधो णाम । कधं बंधस्स परंपरा ? पढमसमए

....

वेदना अनन्तरविधान अनुयोगद्वार अधिकार प्राप्त है ॥ १ ॥

यह सूत्र अधिकारका स्मरण कराता है ।

शंका – इस अधिकारकी प्ररूपणा किसलिये की जा रही है ?

समाधान – पहले वेदनावेदनाविधान अनुयोगद्वारमें 'बध्यमान कर्म भी वेदना है, उदीर्ण और उपशांत कर्म भी वेदना है,' यह प्ररूपणा की जा चुकी है । इनमें जो बध्यमान कर्म है वह क्या बंधनके समयमें ही परिपाकको प्राप्त होकर फल देता है, अथवा द्वितीयादिक समयोंमें फल देता हे, ऐसा पूछे जानेपर 'वह इस प्रकारसे फल देता है' यह ज्ञात करानेके लिये वेदनाअनन्तरविधान अनुयोगद्वारका अवतार हुआ है ।

बन्ध दो प्रकारका है– अनन्तरबन्ध और परम्पराबन्ध ।

शंका – अनन्तरबन्ध किसे कहते हैं ?

समाधान – कार्मण वर्गणा स्वरूपसे स्थित पुद्गलस्कन्धोंका मिथ्यात्वादिक प्रत्ययोंके द्वारा कर्म स्वरूपसे परिणत होनेके प्रथम समयमें जो बन्ध होता है उसे अनन्तरबन्ध कहते हैं ।

शंका – इन पुद्गलस्कंधोंकी अनन्तरबन्ध संज्ञा कैसे है ?

समाधान – चूँकि वे कार्मण वर्गणा रूप पर्यायको छोडनेके अनन्तर समयमें ही कर्मरूप पर्यायसे परिणत हुए हैं, अतः उनकी अनन्तरबन्ध संज्ञा है ।

शंका – परम्पराबन्ध किसे कहते हैं ?

समाधान – बन्ध होनेके द्वितीय समयसे लेकर कर्मरूप पुद्गलस्कन्धों और जीवप्रदेशोंका जो बन्ध होता है उसे परम्पराबन्ध कहते हैं ।

....

(१) ताप्रतौ 'पोग्गलक्खंधा (णं)', इति पाठः ।

(२) अ-आ-काप्रतिषु 'समए अणंतरबंधो', ताप्रतौ 'समए (बंधो) अणंतरबंधो' इति पाठः ।

बंधो जादो, बिदियसमए वि तेसिं पोग्गलाणं बंधो चेव, तदियसमये वि बंधो चेव, एवं बंधस्स णिरंतरभावो बंधपरंपरा णाम । ताए बंधा परम्परबंधा त्ति दट्ठव्वा ।

णेगम-ववहाराणं णाणावरणीयवेयणा अणंतरबंधा[1] ।। २ ।।

कुदो ? बंधपढमसमए चेव जीवस्स परतंतभावुप्पायणेण वेयणाभावुवलंभादो उदिण्ण-दव्वादो बज्झमाणदव्वस्स भेदाभावादो[2] बज्झमाणदव्वस्स णाणावरणीयवेयणाभावो जुज्जदे । ण च अवत्थाभेदेण दव्वभेदो अत्थि, दव्वादो पुधभदअवत्थाणुवलंभादो ।

परंपरबंधा ।। ३ ।।

परंपरबंधा वि णाणावरणीयवेयणा होदि । कुदो ? [3]बंधबिदियादिसमएसु ट्ठिदकम्मक्खंधाणं उदिण्णकम्मक्खंधेहिंतो दव्वदुवारेण एयत्तुवलंभादो ।

तदुभयबंधा ।। ४ ।।

णाणावरणीयवेयणा तदुभयबंधा वि होदि, जीवदुवारेण दोण्णं पि[4] णाणावरणीय-बंधाणमेगत्तुवलंभादो । बंधोदय-संताणं वेयणाविहाणं वेयणावेयणविहाणे चेव परूविदं

....

शंका – बन्धकी परम्परा कैसे सम्भव है ?

समाधान – प्रथम समयमें बन्ध हुआ, द्वितीय समयमें भी उन पुद्गलोंका बन्ध ही है, तृतीय समयमें भी बन्ध ही है, इस प्रकारसे बन्धकी निरन्तरताका नाम बन्धपरम्परा है । उस परम्परासे होनेवाले बन्धोंको परम्पराबन्ध समझना चाहिये ।

नैगम और व्यवहार नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना अनन्तरबन्ध है ।। २ ।।

कारण कि बन्धके प्रथम समयमें ही जीवकी परतन्त्रता उत्पन्न करानेके कारण उसमें वेदनात्व पाया जाता है । अथवा, उदीर्ण द्रव्यकी अपेक्षा बध्यमान द्रव्यमें चूँकि कोई भेद नहीं है, इसलिये इन दोनों नयोंकी अपेक्षा बध्यमान द्रव्यको ज्ञानावरणीयके वेदनास्वरूप मानना समुचित है । यदि कहा जाय कि अवस्थाभेदसे द्रव्यका भी भेद सम्भव है, तो यह कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, (इन नयोंकी दृष्टिमें) द्रव्यसे पृथग्भूत अवस्था नहीं पायी जाती है ।

वह परम्पराबन्ध भी है ।। ३ ।।

ज्ञानावरणीयवेदना परम्पराबन्ध भी है, क्योंकि, बन्धके द्वितीयादिक समयोंमें स्थित कर्मस्कन्धोंकी उदीर्ण कर्मस्कन्धोंके साथ द्रव्यके द्वारा एकता पायी जाती है ।

वह तदुभयबन्ध भी है ।। ४ ।।

ज्ञानावरणीयवेदना तदुभयबंध भी है, क्योंकि, जीवके द्वारा दोनों ही ज्ञानावरणीय बंधों के एकता पायी जाती है । बन्ध, उदय और सत्त्वके वेदनाविधानकी प्ररूपणा चूँकि वेदनावेदन-विधानमें ही की जा चुकी है, अतएव इन सूत्रोंका यह अर्थ नहीं है, इसलिये इनके अर्थकी

....

(१) ताप्रतौ 'बद्धा' इति पाठः । (२) मुद्रित प्रतौ 'वा' इति पाठः ।
(३) ताप्रतौ 'बद्ध' इति पाठः । (४) अ-आ-काप्रतिषु 'वि' इति पाठः ।

ति एदेसिं[1] सुत्ताणं ण एसो अत्थो[2] त्ति एवमेदेसिमत्थपरूवणा कायव्वा । तं जहा– णाणावरणीयकम्मक्खंधा अणंताणंता णिरंतरमण्णोण्णेहि संबद्धा[3] होदूण जे ट्ठिदा ते अणंतरबंधा णाम । एदेण एगादिपरमाणूणं संबंधविरहियाणं णाणावरणभावो पडिसिद्धो दट्ठव्वो । अणंतरबंधाणं चेव णाणावरणीयभावे संपत्ते परंपरबंधा वि णाणावरणीयवेयणा होदि त्ति जाणावणट्ठं बिदियसुत्तं परूविदं । अणंताणंता कम्मपोग्गलक्खंधा अण्णोण्णसंबद्धा होदूण सेसकम्मक्खंधेहिं असंबद्धा जीवदुवारेण इदरेहि संबंधमुवगया परंपरबंधा णाम । एदे वि णाणावरणीयवेयणा होंति त्ति भणिदं होदि । एदेण सव्वे णाणावरणीयकम्मपोग्गलखंधा एगजीवाहारा अण्णोण्णं समवेदा चेव होदूण णाणावरणीयवेयणा होंति त्ति एसो एयंतो णिरागरियो त्ति दट्ठव्वो । सेसं सुगमं ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ।। ५ ।।

जहा णाणावरणीयस्स दोहि पयारेहि परंपराणंतर–तदुभयबंधाणं परूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवणा कायव्वा ।

संगहणयस्स णाणावरणीयवेयणा अणंतरबंधा ।। ६ ।।

एदस्स सुत्तस्स अत्थं भण्णमाणे पुव्वं व दोहि पयारेहि अत्थो वत्तव्वो ।

....

प्ररूपणा इस प्रकारसे करनी चाहिये । यथा – जो अनन्तानन्त ज्ञानावरणीय कर्मरूप स्कन्ध निरन्तर परस्परमें संबद्ध होकर स्थित हैं वे अनन्तरबन्ध हैं । इससे सम्बन्ध रहित एक आदि परमाणुओंको ज्ञानावरणीयत्वका प्रतिषेध किया गया समझना चाहिये । अनन्तरबन्ध स्कन्धोंको ही ज्ञानावरणीयत्व प्राप्त होनेपर परम्पराबन्ध भी ज्ञानावरणीयवेदना होती है, यह जतलानेके लिये द्वितीय सूत्र की प्ररूपणा की गई है । जो अनन्तानन्त कर्म–पुद्गलस्कन्ध परस्परमें सम्बद्ध होकर शेष कर्मस्कन्धोंसे असम्बद्ध होते हुए जीवके द्वारा इतर स्कन्धोंसे सम्बन्धको प्राप्त होते है वे परम्पराबन्ध कहे जाते हैं । ये भी ज्ञानावरणीयवेदना स्वरूप होते हैं, यह उसका अभिप्राय है । इससे एक जीवके आश्रित सब ज्ञानावरणीय कर्मरूप पुद्गलस्कन्ध परस्पर समवेत होकर ज्ञानावरणीयवेदना स्वरूप होते हैं, इस एकान्तका निराकरण किया गया समझना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें जानना चाहिये ।। ५ ।।

जिस प्रकार ज्ञानावरणीय कर्मके परम्पराबन्ध, अनन्तरबन्ध और तदुभयबन्धकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके उन बन्धोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

संग्रह नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना अनन्तरबन्ध है ।। ६ ।।

इस सूत्रके अर्थकी प्ररूपणा करते समय पहलेके समान दो प्रकारसे अर्थका कथन करना चाहिये।

....

(१) ताप्रतौ 'ति । एदेसि', इति पाठः । (२) मप्रतिपाठोऽयम् । अ–आ–का–ताप्रतिषु 'अस्थि' इति पाठः।
(३) अ–आ–ताप्रतिषु 'सबंधं', काप्रतौ 'संबंधा' इति पाठः ।

परंपरबंधा ॥ ७ ॥

एत्थ वि पुव्वं व दोहि पयारेहि अत्थपरूवणा कायव्वा । तदुभयबंधा णत्थि । कुदो ? एदासु चेव तिस्से अंतब्भावादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ ८ ॥

जहा णाणावरणीयस्स संगहणयमस्सिदूण दोहि पयारेहि अत्थपरूवणा कदा तहा सेससत्तण्णं कम्माणं परूवणा कायव्वा ।

उजुसुदस्स णाणावरणीयवेयणा परंपरबंधा ॥ ९ ॥

अणंतरबंधा णत्थि णाणावरणीयवेयणा, परंपराबंधा चेव । कुदो ? उदयमागदकम्मक्खंधादो चेव अण्णाणभावुवलंभादो । बिदियत्थे अवलंबिज्जमाणे कधमेत्थ परूवणा कीरदे ? वुच्चदे- एत्थ वि णाणावरणीयवेयणा[1] परंपरबंधा चेव जीवदुवारेणेव सव्वेसिं कम्मक्खंधाणं बंधुवलंभादो । जीवदुवारेण विणा कम्मक्खंधाणमण्णोण्णेहि बंधो उवलंभदि त्ति चे ? ण, तस्स वि अण्णोण्णबंधस्स जीवादो चेव समुप्पत्तिदंसणादो । कम्मइयवग्गणा-वत्थाए वि एसो अण्णोण्णबंधो उवलब्भदि त्ति चे ? ण, एदस्स विसिट्ठस्स बंधस्स अणंताणंतेहि कम्मइयवग्गणक्खंधेहि णिप्फण्णस्स जीवादो चेव समुप्पत्तिदंसणादो । ण च

....

वह परम्पराबन्ध भी है ॥ ७ ॥

यहाँ भी पहलेके ही समान दो प्रकारसे अर्थकी प्ररूपणा करनी चाहिये । वह तदुभय बन्ध नहीं है, क्योंकि, इन दोनोंमें ही उसका अन्तर्भाव हो जाता है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके विषयमें प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ ८ ॥

जिस प्रकार ज्ञानावरण कर्मकी संग्रहनयकी अपेक्षा दो प्रकारसे प्ररूपणा की है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिए ।

ऋजुसूत्र नयकी अपेक्षा ज्ञानावरणीयवेदना परम्पराबन्ध है ॥ ९ ॥

(इस नयकी अपेक्षा) ज्ञानावरणीयवेदना अनन्तरबन्ध नहीं है, परम्पराबन्ध ही है, क्योंकि, उदयमें आये हुए कर्मस्कन्धों से ही अज्ञानभाव पाया जाता है ।

शंका – द्वितीय अर्थका अवलम्बन करनेपर यहाँ कैसे प्ररूपणा की जाती है ?

समाधान – इस शंकाका उत्तर कहते हैं, द्वितीय अर्थका अवलम्बन करने पर भी ज्ञानावरणीयवेदना परम्पराबन्ध ही है, क्योंकि, जीवके द्वारा ही सब कर्मस्कन्धोंका बन्ध पाया जाता है ।

शंका – जीवका आलम्बन लिये बिना भी कर्मस्कन्धोंका परस्पर बन्ध पाया जाता है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, उस परस्परबन्धकी भी उत्पत्ति जीवसे ही देखी जाती है ।

शंका – यह परस्परबन्ध कार्मण वर्गणाकी अवस्थामें भी पाया जाता है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, अनन्तानन्त कार्मण वर्गणा रूप स्कन्धोंसे उत्पन्न इस विशिष्ट बन्धकी उत्पत्ति जीवसे ही देखी जाती है । अनन्तरबन्ध वेदना उदीर्ण होकर फलकी प्राप्त हुए

....

(१) अ-आ-काप्रतिषु 'वेयणादो,' ताप्रतौ 'वेयणा (दो)' इति पाठः ।

अणंतरबंधा उदिण्णफलपत्तविवागा, परंपरबद्धाए उदिण्णफलपत्तविवागत्तुवलंभादो । ण च समुदयकज्जमेक्कस्स होदि, विरोहादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ।। १० ।।

सुगममेदं ।

सद्दणयस्स अवत्तव्वं ।। ११ ।।

तिण्णं सद्दणयाणं विसए दव्वाभावादो, अणंतरबंधा-परंपरबंधा-तदुभयबंधा सद्दाणं पुधभूदअत्थपरूवयाणं सद्ददो[1] अत्थदो य समासाभावादो वा ।

।। एवं वेयणाअणंतरविहाणे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।।

....

विपाकवाली नहीं है, क्योंकि, परम्पराबद्ध वेदनामें ही उदीर्णफलप्राप्तविपाक पाया जाता है । और समुदायके द्वारा किया गया कार्य एकका नहीं हो सकता, क्योंकि, उसमें विरोध है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंके सम्बन्धमें प्ररूपणा करनी चाहिये ।। १० ।।

यह सूत्र सुगम है ।

शब्द नयकी अपेक्षा वह अवक्तव्य है ।। ११ ।।

कारण कि एक तो तीनों शब्द नयोंका विषय द्रव्य नहीं है । दूसरे अनन्तरबन्ध, परम्पराबन्ध और तदुभयबन्ध ये शब्द पृथक् पृथक् अर्थके वाचक होनेसे इनका शब्द और अर्थकी अपेक्षा समास नहीं हो सकता, इसलिए वह इस नयकी अपेक्षा अवक्तव्य है ।

इस प्रकार वेदनाअनन्तरविधान अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

● ● ●

....

(१) अ-आ-काप्रतिषु 'अत्थपरूवाणं' ण सद्दा 'ताप्रतौ 'परूवणंण (याणं) सद्ददो' इति पाठः ।